Topic 78

कर्मकर्तृ प्रक्रिया

यदा कर्मैव कर्तृत्वेन विवक्षितं तदा सकर्मकाणामप्यकर्मकत्वात्कर्तरि भावे च लकारः।

कर्मवत् कर्मणा तुल्यक्रियः।

कर्मस्थया क्रियया तुल्यक्रियः कर्ता कर्मवत् स्यात्। कार्यातिदेशोऽयम्। तेन यगात्मनेपदचिण्वदिटः स्युः। पच्यते फलम्। भिद्यते काष्ठम्। अपाचि। अभेदि। भावे तु भिद्यते काष्ठेन।

कर्मस्थ क्रिया के तुल्य क्रिया वाला कर्ता कर्मवत् होता है। तात्पर्य यह है कि जिस कर्म के कर्ता हो जाने पर भी कर्म के समान ही क्रिया लक्षित होती है, वह कर्ता कर्मवत् होता है। इसी को कर्म-कर्ता भी कहते हैं। कर्मवत् होने पर कर्मवाच्य के समान ही यहाँ भी यक् आत्मनेपद और चिण्वद् आदि कार्य होते हैं। उदाहरण के लिए 'कालः फलं पचति' में पाचन क्रिया का विशेष कार्य (गल जाना) कर्म (फलम्) में होता है। यही कर्म फलम् जब कर्ता बनता है तो उसका रूप बनता है पच्यते फलम्। यहाँ भी कर्ता 'फलम्' में पूर्ववत् क्रिया का 'गल जाना' कार्य प्राप्त है। अतः उसके कर्म-कर्ता हो जाने पर कर्मवद्भाव होता है तब लट् लकार के प्रथमपुरुष एकवचन में 'पच्' धातु से आत्मनेपद 'त' और यक् होकर 'पच्य' रूप बनता है। यहाँ एत्व होकर 'पच्यते' रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार भिद्यते काष्ठम् में 'काष्ठम्' के कर्म-कर्ता होने के कारण पूर्ववत् भिद् धातु का 'भिद्यते' रूप बनता है